महात्रिपुरसुन्दरी-स्वरूप ॐकार की शक्ति-साधना

मणिपूरविहितवसतेः स्तनयित्नोः सदाशिवांके लसिता।
सौदामिनी स्थिरा सा त्रिपुरा भातु चिदम्बरे नः॥

ओंकार की निष्पत्ति का मूल 'अजपागायत्री'

मन्त्रशास्त्रों में विवरण प्राप्त होता है कि सहस्रार की कर्णिका के अन्तर्गत द्वादशदल कमल के मध्य मणिपीठ में **'ह-स'** अक्षर ही श्वास-प्रश्वास के मूल में व्याप्त हैं और इन्हीं के आधार पर **'हं सः'** स्वरूप गुरु के दोनों चरणों की भावना की जाती है। **'गुरुपादुका-पञ्चक'** में कहा गया है-

ऊर्ध्वमस्य हुतभुक्शिखात्रयं तद्विलासपरिबृंहणास्पदम्।
विश्वघस्मरमहोच्चिदोत्कटं व्यामृशामि युगमादिहंसयोः॥

'हंस' मन्त्र का श्वास-प्रश्वास में अवसरण होकर बिना किसी श्रम के जब जप होता है, तब यह **'अजपा-गायत्री'** के नाम से ज्ञात होता है तथा आरोहा-वरोहात्मक क्रम से जप होने पर यह मन्त्र **'हंसः सोऽहम्'** रूप में मान्य होता है।

हकारेण बहिर्याति सकारेण विशेत् पुनः।
हंसोऽतिपरमं मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा॥

'शक्तिसंगम-तन्त्र' ने विशेष रूप से स्पष्ट करते हुए यही कहा है-

हकारस्य सकारस्य लोपे कामकला भवेत्।

इस प्रकार वर्णद्वयत्याग अर्थात् हकार-सकार के लोपसे ओ+अम्=ॐ हो गया तथा बिन्दु और विसर्ग कामकलात्मक त्रिकोण बन गया। यह बात निम्नलिखित वचन से स्पष्ट है-

मुखं बिन्दुवदाकारं तदधः कुचयुग्मकम्।
सोऽमित्यत्र देवेशि प्रणव परिनिष्ठितः॥

श्वास-प्रश्वास की क्रिया में **'हंसः'** मन्त्र विपरीतगतिक होकर **'सोहम्'** बन जाता है। इसी के मध्य अकार प्रश्लेष मानने से **'सोऽहम्'** रूप ध्वन्यात्मक उत्पत्ति होती है। इसके **'अनाहत-चक्र'** पर संघर्ष से वायुमय प्रणव की अनाहत ध्वनि होकर उसकी ऊर्ध्वगति होने से आज्ञाचक्र पर स्थिति हो जाती है। इस कथन

से भी **'प्रणव'** श्रीविद्या का बीज और कामकलारूप है। इसी सुन्दरी श्रीविद्यारूप बिन्दु से नादरूप पृथक् बिन्दु बना, जो **'कामेश्वर'** अथवा **'परमशिव'** कहलाया।

प्रणव के सम्बन्ध में आगमिक दृष्टि

'महाकाल-संहिता' के दक्षिणखण्डानुसार भगवती के दिव्य मानसिक आत्मरमण-आनन्द से बिन्दु का उद्भव हुआ, जो श्रीविद्यारूपिणी है और वही कला-सप्तक से युक्त होकर प्रणवरूप बना। यथा-

एतस्मिन्नेव काले तु स्वबिम्बं पश्यति शिवा।
तद्बिम्बं तु भवेन्माया तत्र मानसिकं शिवम्॥
विपरीतरतौ देवि बिन्दुरेकोऽभवत् पुरा।
श्रीमहासुन्दरीरूपं विभ्रती परमाः कलाः॥
प्रणवः सुन्दरी रूपः कलासप्तकसंयुतः॥

प्रणव की इन सात कलाओं के विषय में तन्त्रों का भी वचन है-

आदौ परा विनिर्दिष्टा ततश्चैव परात्परा।
तदतीता तृतीया स्याच्चित्परा च चतुर्थिका॥
तत्परा पंचमी ज्ञेया तदतीता रसाभिधा।
सर्वातीता सप्तमी स्यादेवं सप्तविधा कला॥

इसके अनुसार १-परा, २-परात्परा, ३-परातीता, ४-चित्परा, ५-चित्परा-त्परा, ६-चिदतीता और ७-सर्वातीता- ये सात कलाएँ ओंकार में निविष्ट हैं। ये कलाएँ इन नामों से अभिहित होकर ही सुन्दरी कला के पञ्चकृत्यकारी शिव तथा बिन्दु-नादरूप शिव-शक्ति के बोधक कहे गये हैं। १-ब्रह्मा, २-विष्णु, ३-रुद्र, ४-ईश्वर तथा ५-सदाशिव- ये पञ्च महाप्रेत हैं, जो प्रणव में निविष्ट हैं। भगवती के महासिंहासन के ब्रह्मा आदि चार पाद हैं और आच्छादन भगवान् कामेश हैं, जहाँ सुन्दरी-कला विराजमान हैं। यही कारण है कि **'श्रीचक्र'** की षोडशावरण-पूजा करने वाले साधक बिन्दुचक्र में त्रिबिन्दुरूप महावैन्दवचक्र की भावना करके उसमें ऊर्ध्वभागस्थ बिन्दु को प्रणवरूप मानते हुए उसकी अर्चना करते हैं। वहाँ वेदत्रयस्वरूपिणी महानिर्वाणसुन्दरी की अङ्गदेवता वेदाधिष्ठात्री शक्तियों की पूजा

के पश्चात् प्रणव के पाँच अङ्गों में-१-ऊर्ध्वशुण्ड, २-अधःशुण्ड, ३-मध्यशुण्ड एवं ४-चन्द्रकला में विद्या-अविद्यादि तथा ५-बिन्दु में सृष्टयादि सुन्दरीपञ्चक की पूजा होती है। मध्यबिन्दु में स्थित अङ्गुष्ठरूप पुरुष के शुक्लादि सप्त चरण, षडन्वयादि सप्त शाम्भव तथा कूटत्रय की अर्चना विहित है।

ओंकार का स्वरूप-विस्तार

प्रणव के इस महत्त्वपूर्ण चिन्तन की दिशा में तन्त्रशास्त्रों का योगदान अत्यन्त विशाल है। भिन्न-भिन्न तन्त्रों आगमों में स्वेष्ट देवताकृत का स्वरूप ओंकारमय ही दिखलाया गया है। आद्यशङ्कराचार्य ने 'श्रीयतिदण्डैश्वर्यविधान' नामक महाग्रन्थ में प्रणव या ओंकार को यति के दण्ड की प्रतिकृति सिद्ध करते हुए सन्यासियों के लिये उसे साक्षात् अद्वैतब्रह्म का बोधक तो बतलाया ही है, साथ ही यतिदण्ड को 'श्रीचक्र' का रूप प्रतिपादित करने की धारा में ओंकार की कुल २५६ मात्राओं तथा उनकी शक्तियों का भी सारगर्भित विवेचन प्रस्तुत किया है।

भगवान् श्रीराम भी 'रामगीता' में हनुमानजी को ओंकार की इन्हीं २५६ मात्राओं का उपदेश दिया है, किंतु वहाँ उक्त मात्राओं की शक्तियों का उल्लेख नहीं है, जिसे आद्यशङ्कराचार्य ने दिखलाकर 'शाक्त-सम्प्रदाय' के उपासकों के लिये ब्रह्मविद्या का द्वार खोल दिया है।

'श्रीत्रिपुरोपनिषद्' के भाष्यकार श्रीरामानन्द यति ने अपने भाष्य में श्रीविद्या को ही ब्रह्मविद्या प्रतिपादित किया है। इस दृष्टि से भी इन २५६ मात्राओं एवं उनकी शक्तियों का विवेचन अत्यन्त उपादेय है। इससे ओंकार के स्वरूप-विस्तार को समझने में पूर्ण सहायता प्राप्त होगी।

प्रणव की तान्त्रिक महिमा एवं वर्णत्रय

यद्यपि **'प्रणवश्च स्मृतः साक्षादद्वैतब्रह्मबोधकः'** कहकर प्रणव को अद्वैतब्रह्म का बोधक कहा गया है, तथापि इसे मन्त्रशास्त्र में व्याप्त तत्त्व, मन्त्र, दैवतविग्रह, सर्वाम्नाय-मूलक तथा मोक्ष का बोधक व्यक्त करते हुए आद्यशङ्कराचार्य ने सर्वप्रथम कहा है-

सर्वतत्त्वमयः सर्वमन्त्रदैवतविग्रहः।
सर्वाम्नायात्मकश्चायं प्रणवः परिपठ्यते।
शब्दब्रह्मात्मना सोऽयं महानिर्वाणबोधकः॥

यही कारण है कि प्रत्येक साधना-पथ के पथिक को प्रणव में स्थित मात्राओं और मन्त्रों को अवश्य जानना चाहिये। प्रणव की संरचना 'अ+उ+म्'- इन तीनों वर्णों से हुई है, जिससे सर्वसामान्यजन परिचित है। प्रणव का लेखन ऊर्ध्वशुण्ड, मध्यशुण्ड और अधःशुण्ड के रूप में चन्द्रकला एवं बिन्दु के योग से पूर्ण होता है। ये तीन शुण्डरूप प्रमुख भाग ही सोम, सूर्य और अग्निरूपी तीन मात्राएँ ॐ में विराजमान हैं। यथा-

सोमसूर्याग्निरूपास्तु तिस्त्रो मात्राः प्रतिष्ठिताः ।
प्रणवे स्थूलरूपेण याभिर्विश्वं व्यवस्थितम् ।।

वैसे तान्त्रिक ग्रन्थों में सोम की एक सौ छत्तीस, सूर्य की एक सौ सोलह और अग्नि की एक सौ आठ मात्राएँ बतलायी गयी हैं। ये सब मिलकर तीन सौ साठ होती हैं तथा इन्हीं से एक वर्ष के दिवसों का बोध होता है। अतः प्रणव के अ+उ+म्-'ये तीन वर्ण क्रमशः सोम, सूर्य और अग्नि के प्रतीक होने के साथ ही हमारी वर्षगणना के भी द्योतक हैं।

उपर्युक्त तीन मात्राओं के सूक्ष्म-चिन्तन से पञ्चमात्रात्मक ओंकार का बोध कराते हुए कहा है- अ उ मा नादबिन्दू च मात्राः पञ्च यथाक्रमः।

अर्थात् ॐ 'अ, उ, म्, नाद और बिन्दु- ये पाँच मात्राएँ क्रमशः हैं। **'ईशान-शिवगुरुदेव पद्धति'** के द्वितीय पटल के 'प्रणवाधिकार में ॐ के अ-उ-म्-बिन्दु-नादरूप पञ्चभेदात्मक स्वरूप की पचास कलाओं का निर्देश किया गया है। यथा-

अकार की दस कलाएँ- १- सृष्टि, २- ऋद्धि, ३- स्मृति, ४- मेधा, ५- कान्ति, ६- लक्ष्मी, ७- धृति, ८- स्थिरा, ९- स्थिति और १०- सिद्धि।

उकार की दस कलाएँ- १- जरा, २- पालिनी, ३- शान्ति, ४- ऐश्वरी, ५- रति, ६- कामिका, ७- वरदा, ८- ह्लादिनी, ९- प्रीति और १०- दीर्घा।

मकार की दस कलाएँ- १- तीक्ष्णा, २- रौद्रा, ३- माया, ४- निद्रा, ५- तन्द्री, ६- क्षुधा, ७- क्रोधिनी, ८- क्रिया, ९- उत्कारिका, १०- मृत्यु।

बिन्दु की चार कलाएँ- १- पीता, २- श्वेता, ३- अरुणा और ४- गौरी।

नाद की सोलह कलाएँ- १-निवृत्ति, २-प्रतिष्ठा, ३-विद्या, ४-शान्ति, ५- रन्धिका, ६- दीपिका, ७- रेचिका, ८- मोचिका, ९- सूक्ष्मा, १०- असूक्ष्मा, ११- अमृता, १२- ज्ञानामृता, १३- आप्यायनी, १४- व्यापिनी, १५- व्योमरूपा तथा १६- अनन्ता।

ये कलाएँ क्रमशः ऋग्वेद में ब्रह्म सृष्टि हेतु, यजुर्वेद में विष्णु-स्थितिहेतु, सामवेद में-रुद्र-संहारहेतु, अथर्ववेद में ईश्वरात्मिका सर्वकामप्रद एवं सदाशिवात्मिका भुक्ति मुक्तिप्रद बतलायी गयी हैं।

---श्री बर्फानी संदेश से उद्धृत